इंकलाबी मज़दूर केन्द्र का पर्चा

आसमान छूती महंगाई का जिम्मेदार कौन?

देश भर में मज़दूर मेहनतकश गरीब जनता इस समय महंगाई की तीखी मार झेल रही है। महंगाई यूं तो सभी चीजों में तेजी से बढ़ रही है लेकिन खाद्यान्नों (दाल, गेहूं, चावल, चीनी) व सब्जियों के दाम अभूतपूर्व रूप से बढ़ गए हैं। सरकारी सूत्रों के अनुसार खाद्य पदार्थों का थोक मूल्य सूचकांक इस वर्ष 15.58 प्रतिशत बढ़ा है। आलू के भाव वार्षिक आधार पर 111 फीसदी, दाल की कीमतों में मार्च 2009 में अब तक 35 फीसदी तथा प्याज में 27 फीसदी तथा कुल सब्जियों के औसत दाम 62 फीसदी बढ़ गए हैं। आखिर क्या है इस आसमान छूती महंगाई का कारण? सरकार के अनुसार इस साल मानसून के सही वक्त पर न आने तथा बारिश कम होने के चलते अनाज का उत्पादन कम हुआ है। सरकार कालाबाजारियों व जमाखोरों की भी इसमें भूमिका बता रही है। सरकार के मुताबिक वह महंगाई के लिए जिम्मेदार नहीं है।

महंगाई के बारे में उपरोक्त कारण जो सरकार बता रही है वह असली सच को छुपाने की कोशिश है। यह बात सही है कि इस साल मानसून देरी से आया। देश के कई जिले सूखे से प्रभावित हुए। लेकिन मानसून का देरी से आना व कम वर्षा का होना और उत्पादन में गिरावट महंगाई के असली कारण नहीं हैं। ये महज असली कारणों के प्रभाव हैं, असली कारण कहीं गहरे हैं। भारत में खाद्य पदार्थों में महंगाई की जड़ में असल में पिछले लगभग एक दशक से व्याप्त कृषि संकट है। वर्षा में कमी या मानसून के विलंब ने इस कृषि संकट को तीखेपन के साथ उघाड़ कर रख दिया है। अर्थव्यवस्था में तेजी बढ़ोतरी के दावों के बीच कृषि विकास दर लंबे समय से 2 से 2.5 प्रतिशत ही बनी हुई है। पिछले पांच सालों में देश में खाद्यान्न उत्पादन ठहराव की स्थिति में आ गया था। यह स्थिति अपने आप नहीं बनी। कृषि की बुरी गत के लिए पिछले डेढ़-दो दशकों में जारी सरकार की नवउदारवादी नीतियां जिम्मेदार हैं।

इन नवउदारवादी नीतियों के तहत जहां कृषि पर होने वाले सार्वजनिक निवेश को कम अथवा सीमित किया गया, वहीं कृषि में आत्मनिर्भरता हासिल करने के बजाय विदेशी बाजारों से जरूरत के अनुरूप आयात-निर्यात करने पर जोर दिया गया। कृषि में सार्वजनिक निवेश सीमित या कम करने के चलते नई नदी-नहर परियोजनाओं को विकसित करने के काम की अपेक्षा की गई फलस्वरूप सिंचित कृषि क्षेत्र में बढ़ोत्तरी नहीं हुई। कृषि अधिकाधिक वर्षा या मानसून पर निर्भर होने लगी। इसी के साथ सरकार ने खाद, बीज आदि में दी जाने वाली सब्सिडी में कटौती की। न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित करने में हीलाहवाली की। किसान औने पौने दामों में अपनी उपज बिचौलियों को बेचने को मजबूर हुए क्योंकि इन सबके चलते छोटे किसानों के लिए खेती करना

> **"महंगाई के चलते मजदूर वर्ग की वास्तविक मजदूरी काफी घट गई है। तमाम पूंजीवादी पार्टियां भी महंगाई का विरोध कर रही हैं। दरअसल वे केवल जनता को भरमाने के लिए ऐसा कर रही है। सभी पूंजीवादी पार्टियों के हित बड़े व्यापारियों, जमाखोरों व सट्टेबाजों से जुड़े हैं। वे केवल विरोध का नाटक कर रही हैं।"**

घाटे का सौदा होने लगा। किसानों के कंगालीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई।

कंगाल-बर्बाद होते किसानों को सरकार ने नकदी या व्यवसायिक फसलें उगाने का झुनझुना थमाया। इस पूरी प्रक्रिया में खाद्यान्न उत्पादन हेतु खेती की भूमि का आकार अथवा रकबा कम होता गया। नकदी फसलों के लिए छोटे किसानों ने बहुराष्ट्रीय कंपनियों से महंगा बीज खरीदा तो सूदखोरों से महंगे ब्याज पर ऋण लिया। अंततः फिर बाजार के खिलाड़ियों द्वारा कीमतें गिराने-उठाने के खेल में बर्बाद होकर भारी संख्या में छोटे किसान सब कुछ लुटाकर आत्महत्या को मजबूर हुए। कंगाल बर्बाद होते किसानों के खेत भूमाफियाओं, बिल्डरों व पूंजीपतियों ने कौड़ी के मोल खरीद लिए। इस पूरी प्रक्रिया में जहां लाखों की संख्या (लगभग डेढ़ लाख) किसान पिछले एक दशक में आत्महत्या के लिए मजबूर हुए वहीं बहुराष्ट्रीय बीज निगमों, जमाखोरों, बिचौलियों, भूमाफियाओं ने अकूत दौलत कमायी। छोटे किसानों की बर्बादी के साथ खाद्यान्न का रकबा तथा उत्पादन दोनों प्रभावित हुए।

बात इतने तक नहीं रुकी। कोढ़ में खाज का काम करते हुए सरकार ने 2003 में कृषि आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 तथा वायदा सौदा अधिनियम 1952 में परिवर्तन कर व्यापारियों व जमाखोरों को गेहूं, चीनी जैसी जरूरी चीजों तथा 17 कृषि उत्पादों व धातुओं की जमाखोरी व सट्टेबाजी की छूट दे दी। ये सट्टेबाज बाजार में कीमतों में उतार चढ़ाव पैदा कर अकूत मुनाफा कमा रहे हैं। इसी के साथ सरकार ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत गरीबों को मिलने वाले सस्ते गल्ले के राशन में कटौती करना व उसके दाम बढ़ाना शुरू कर दिया। इस तरह सरकार ने गरीबों की थाली के आखिरी दाने छीन कर जमाखोरों व कालाबाजारियों को लूट-खसोट मचाने का मौका प्रदान किया। इस दौरान सरकार ने कौड़ियों के मोल काफी बड़ी मात्रा में (लगभग 1.74 लाख हजार हेक्टेयर) कृषि भूमि अधिगृहित कर बड़े पूंजीपतियों को उद्योग के लिए दे दी। इससे भी कृषि योग्य भूमि का रकबा कम हुआ है। इस सब मूलभूत कारकों के अलावा पूंजीपतियों को भारी मात्रा में टैक्स छूट व पैकेज देने से जनता पर टैक्सों का भार बढ़ा है तथा मुद्रा प्रसार बढ़ने से महंगाई बढ़ी है। मंदी के दौर में बैंकों द्वारा रेपो रेट घटाकर बाजार में अतिरिक्त मुद्रा की निकासी ने भी जमाखोरों व सट्टेबाजों को प्रोत्साहित किया है।

इस तरह महंगाई का कारण उदारीकरण की नीति के तहत कृषि आत्मनिर्भरता का लक्ष्य छोड़ने, कृषि पर सार्वजनिक व्यय घटाने, सट्टेबाजी व जमाखोरी को बढ़ाने, सस्ते गल्ले के राशन की व्यवस्था को कमजोर व लचर बनाने तथा साम्राज्यवादी व देशी पूंजीपतियों के वास्ते उद्योगों द्वारा कृषि का दोहन करने की नीतियां रही हैं।

मज़दूर वर्ग और मेहनतकश गरीब जनता को महंगाई की सबसे तीखी मार झेलनी पड़ रही है।

महंगाई के चलते मजदूर वर्ग की वास्तविक मजदूरी काफी घट गई है। तमाम पूंजीवादी पार्टियां भी महंगाई का विरोध कर रही हैं। दरअसल वे केवल जनता को भरमाने के लिए ऐसा कर रही है। सभी पूंजीवादी पार्टियों के हित बड़े व्यापारियों, जमाखोरों व सट्टेबाजों से जुड़े हैं। वे केवल विरोध का नाटक कर रही हैं। ▯

भोपाल गैस कांड की 25वीं बरसी पर विशेष : यूनियन कार्बाइड को बचाकर

अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में जज बने थे आर.एस. पाठक

बहुराष्ट्रीय कंपनी 'यूनियन कार्बाइड' के भोपाल स्थित कीटनाशक बनाने के कारखाने से दिसंबर 1984 में 27 टन मिथाइल आइसोसायनेट जहरीली गैस का रिसाव हो गया। यह बात जांच में साबित हो गई कि न सिर्फ मात्रा से कहीं ज्यादा जहरीले रसायन इकट्ठा किए गए थे और वह भी बिना किसी सुरक्षा कवच के। यही नहीं, रात के वक्त नियमों के खिलाफ टैंकों की धुलाई का काम किया जा रहा था और टैंकों में पानी घुस जाने से ही दुर्घटना हुई। 2000 लोग तुरंत मारे गए। अगले दो दिन में 6000 और मारे गए। घटना रात के वक्त हुई जब सारा शहर सोया हुआ था। जहरीली गैस तेज हवाओं के साथ सर्दी की रात में बड़े इलाके में फैल गई। 8000 मृतकों के अलावा लगभग ढाई लाख लोग जहरीली गैस से प्रभावित हुए जिनमें गंभीर किस्म की बीमारियां पनपती रहीं और अगले दस साल में 20 हज़ार लोग और मारे गए। प्रभावित लोगों की तीन-चार पीढ़ियां किसी न किसी रूप से इस ज़हर के संक्रमण से अपंग होती रहेंगी। यूनियन कार्बाइड ने इसकी कोई जिम्मेवारी लेने से इनकार कर दिया। प्रभावित लोगों ने सामाजिक संगठनों की मदद से अमेरिका में दावे दायर किए। भारत सरकार ने संसद से मार्च 1987 में कानून पास करा कर खुद को सारे व्यक्तिगत दावों का एकमात्र प्रवक्ता बना लिया। भारत सरकार की ओर से अमेरिकी अदालत के सामने कहा गया कि भारत की कानून व्यवस्था पिछड़ी हुई है और अदालतें सुस्त हैं, इसलिए कार्रवाई अमेरिकी कानून के तहत अमेरिकी अदालत करे, जबकि यूनियन कार्बाइड ने भारत में कार्रवाई की जिद पकड़ भारत की अदालत और जजों की काफी प्रशंसा की। अमेरिकी अदालत ने मुकदमे भारत में चलाने को कहते हुए याचिकाएं खारिज कर दीं। यह सब प्रपंच रचने का नक्शा भी सामने आता गया।

मुकदमे भारत में दायर हुए। दीवानी भी, फौजदारी भी। सरकार की तरफ से दायर दावे में जिला जज ने 350 करोड़ रुपए की अंतरिम राहत का आदेश पारित किया। मध्यप्रदेश हाईकोर्ट ने उसे घटाकर 250 करोड़ कर दिया और सुप्रीम कोर्ट ने यूनियन कार्बाइड की याचिका पर इस अंतरिम राहत का आदेश पर पूरी तरह रोक लगा दी। मामला अब विद्वान मुख्य न्यायाधीश आर.एस. पाठक की अदालत में था। यहां पर इतना बताना जरूरी है कि आम तौर से अंतरिम आदेशों के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट कोई याचिका स्वीकार नहीं करता, मगर यहां मामला कुछ और था। न सिर्फ याचिका स्वीकार कर ली गई, अपितु स्थगनादेश भी जारी कर दिया गया। जब

> **"अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश बर्गर ने एक बार कहा था कि हम सर्वोच्च न्यायालय हैं और हम जो चाहें कर सकते हैं। भारत की सुप्रीम कोर्ट ने अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट की इस गर्वोक्ति पर यूनियन कार्बाइड मामले में फैसला देकर मोहर लगा दी। कब भारत की जनता गर्वोक्ति का उत्तर देते हुए दिखाएगी कि 'सर्वोच्च' सिर्फ वह है और कोई नहीं। तब पाठक जैसे लोग घास के उस पुतले की तरह होंगे जो जनता के उठने से अपनी अदालतों के साथ ही धुआं हो जाएंगे।"**

हो-हल्ला मचा तो याचिका पर सुनवाई की प्रक्रिया शुरू करनी पड़ी। सुनवाई के दौरान यह देखते हुए कि मामला कानून के हिसाब से यूनियन कार्बाइड के खिलाफ जा सकता है आर.एस. पाठक ने पक्षकारों के बीच समझौते का प्रस्ताव रख दिया। मतलब यह कि मामले को ले-देकर निपटाया जाए। जैसे सब कुछ पहले से ही सोच लिया गया हो। पाठक की अदालत द्वारा 750 करोड़ का मुआवजा तय कर दिया गया और आदेश पारित करते हुए कहा गया कि इसके साथ ही यूनियन कार्बाइड के विरुद्ध तमाम दीवानी और फौजदारी मुकदमे समाप्त समझे जाएंगे। यही नहीं भविष्य में कोई मुकदमा प्रभावित नहीं कर पाएंगे। है न कमाल का जूरिसप्रूडेन्स।

यह आदेश पारित हुआ 15 फरवरी 1989 को और इसके साथ ही श्रीमान आर.एस. पाठक के अंतरराष्ट्रीय न्यायालय, हेग में जज बनने की कवायद शुरू हो गई। अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में जज अमेरिकी आशीर्वाद के बगैर नहीं बना जा सकता और इसको जुटाना यूनियन कार्बाइड के लिए बहुत मुश्किल नहीं था। 18 जून 1989 को आर.एस. पाठक अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में जज बन गए। यानी 'इस हाथ दे और उस हाथ ले' संपन्न हुआ।

यूनियन कार्बाइड मामले में दिए गए सुप्रीम कोर्ट के फैसले की दुनिया भर में कड़ी आलोचना हुई। न सिर्फ इसलिए कि 750 करोड़ का कुल मुआवजा बहुत ही मामूली था और अपंग व नकारा कर दिए गए लोगों का जीवन निर्वाह तो दूर उनके इलाज के लिए भी काफी नहीं था, बल्कि इसलिए भी कि यूनियन कार्बाइड के लिए मनचाहा आदेश पारित करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने कानून की तरफ से जैसे आंख ही मूंद ली थी। यूनियन कार्बाइड और इसके अधिकारियों के खिलाफ दायर फौजदारी मुकदमे जिनका सुप्रीम कोर्ट के सामने लंबित याचिका से कोई वास्ता नहीं था, निरस्त कर दिए गए थे। खुद सुप्रीम कोर्ट ने बाद में यह माना था कि ऐसा आदेश गैर कानूनी था।

अन्य याचिका जिसमें उस कानून को चुनौती दी गई थी जिससे भारत सरकार ने खुद को प्रभावित लोगों का स्वयंभू प्रवक्ता बना लिया था, सुप्रीम कोर्ट ने जानबूझकर लंबित रखी। जज सव्यसाची मुखर्जी ने साफ कहा कि 'हमने याचिका जानबूझकर लंबित रखी ताकि माहौल ठंडा हो जाए।'

अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश बर्गर ने एक बार कहा था कि हम सर्वोच्च न्यायालय हैं और हम जो चाहें कर सकते हैं। भारत की सुप्रीम कोर्ट ने अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट की इस गर्वोक्ति पर यूनियन कार्बाइड मामले में फैसला देकर मोहर लगा दी। कब भारत की जनता गर्वोक्ति का उत्तर देते हुए दिखाएगी कि 'सर्वोच्च' सिर्फ वह है और कोई नहीं। तब पाठक जैसे लोग घास के उस पुतले की तरह होंगे जो जनता के उठने से अपनी अदालतों के साथ ही धुआं हो जाएंगे। जनता ने इतिहास में बार-बार यह करके दिखाया है और फिर दिखाएगी।

▯ **विशेष प्रतिनिधि**